
इकाई 11 बौद्ध धर्म, जैन धर्म तथा अन्य धार्मिक विचार*

इकाई की रूपरेखा

- 11.0 उद्देश्य
- 11.1 प्रस्तावना
- 11.2 नये धार्मिक विचारों का उद्भव
- 11.3 गौतम बुद्ध और बौद्ध धर्म की उत्पत्ति
- 11.4 बुद्ध के उपदेश
- 11.5 बौद्ध मत का विकास
 - 11.5.1 बौद्ध धर्म का विस्तार
 - 11.5.2 बौद्ध संघ (संस्था के रूप में)
 - 11.5.3 बौद्ध मत की सभायें
 - 11.5.4 बौद्ध धर्म के सम्प्रदाय
- 11.6 जैन धर्म की उत्पत्ति
 - 11.6.1 पार्श्वनाथ
 - 11.6.2 महावीर
- 11.7 महावीर के उपदेश
- 11.8 जैन धर्म का विकास
 - 11.8.1 जैन धर्म का विस्तार
 - 11.8.2 जैन सभायें
 - 11.8.3 विभिन्न सम्प्रदाय
- 11.9 अन्य विधार्मिक विचार
 - 11.9.1 आजीवक संप्रदाय
 - 11.9.2 अन्य विचार
- 11.10 नये धार्मिक आंदोलनों का प्रभाव
- 11.11 सारांश
- 11.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 11.13 शब्दावली
- 11.14 संदर्भ ग्रंथ

11.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप यह जान पाएँगे :

- कि लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. में नये धार्मिक विचारों के उदय की पृष्ठभूमि क्या थी;
- कि बौद्ध मत और जैन मतों का उद्भव और विकास कैसे हुआ;

* यह इकाई ई.एच.आई.-02, खंड-4 से ली गई है।

- कि इन धर्मों के मुख्य सिद्धान्त क्या थे;
- कि इन धर्मों का समकालीन समाज पर क्या प्रभाव पड़ा;
- कि लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. में प्रचलित अन्य विधार्मिक विचार क्या थे; और
- इन धार्मिक आंदोलनों का महत्त्व क्या था।

11.1 प्रस्तावना

भारतीय इतिहास में छठी शताब्दी बी.सी.ई. का बड़ा महत्त्व है क्योंकि यह काल नये धर्मों के विकास से सम्बद्ध है। हम पाते हैं कि इस काल में ब्राह्मणों के अनुष्ठानिक रूढ़िवादी विचारों का विरोध बढ़ रहा था। फलतः बहुत सारे भिन्न मत वाले धार्मिक आंदोलनों का उद्भव हुआ। इनमें से बौद्ध मत एवं जैन मत संगठित तथा लोकप्रिय धर्मों के रूप में विकसित हुए। इस इकाई में इन नये धार्मिक विचारों के उद्भव और महत्त्व को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

इस इकाई में सबसे पहले, विधार्मिक विचारों के उद्भव तथा फैलाव के लिए उत्तरदायी कारणों को विश्लेषित किया गया है। फिर यह बताया गया है कि बुद्ध तथा महावीर ने किस प्रकार से मानव के दुःख का समाधान खोजने के लिए अपने तरीके से प्रयास किए। क्योंकि दोनों धर्मों के उद्भव के कारणों में समानता है, इसलिये दोनों धर्मों के कुछ सिद्धांत भी समान हैं। परन्तु इनके कुछ मूल सिद्धान्तों में भिन्नता भी है। इन्हीं मुद्दों पर इस इकाई में विवेचन किया गया है।

इस इकाई में लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. में उभरे अन्य विधार्मिक विचारों के विषय में भी बताया गया है। अन्त में इस तथ्य का विवेचन किया गया है कि इन नये धार्मिक आंदोलनों का तात्कालिक आर्थिक-सामाजिक व्यवस्था पर क्या प्रभाव पड़ा।

11.2 नये धार्मिक विचारों का उद्भव

नये धार्मिक विचारों का उद्भव उस युग की प्रचलित सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक परिस्थितियों के अंतर्गत निहित था। अब हम उन आधारभूत कारणों का विवेचन करेंगे जिन्होंने इनके उद्भव में भूमिका अदा की।

- i) इस काल के नये समाज के संदर्भ में वैदिक धर्म पद्धति जटिल तथा अर्थ-विहीन हो गयी थी। बलि एवं अनुष्ठान अक्सर बड़े पैमाने पर आयोजित किए जाने लगे। बड़े समुदाय के बिखरने के साथ-साथ आयोजनों में लोगों की भागीदारी कम हो गई और समाज के कई समूहों के लिए अर्थहीन हो गई।
- ii) बलि-यज्ञों तथा अनुष्ठानों के बढ़ते महत्त्व ने समाज में ब्राह्मण समुदाय के प्रभुत्व को स्थापित किया। वे पुजारी तथा अध्यापक, दोनों का कार्य करते थे और धार्मिक अनुष्ठानों के आयोजन पर अपने एकाधिकार के कारण वे चार वर्णों में विभाजित समाज में अपने को सर्वश्रेष्ठ मानते थे।
- iii) समकालीन आर्थिक-राजनीतिक परिस्थितियों ने भी नए सामाजिक समुदायों के उद्भव में मदद की। ये समुदाय आर्थिक रूप से सम्पन्न थे। शहर में रहने वाले व्यापारियों तथा अमीर खेतिहर समुदायों के पास प्रचुर सम्पत्ति थी। क्षत्रिय समुदाय, चाहे वे राजतंत्र में हो अथवा गणतंत्र में, के हाथ में अब पहले से अधिक राजनीतिक शक्ति थी। ये सामाजिक समुदाय उस सामाजिक व्यवस्था का विरोध कर रहे थे, जो ब्राह्मणों ने वंश के आधार पर निर्धारित की थी। बौद्ध मत तथा जैन मत ने जन्म के आधार पर सामाजिक

व्यवस्था की अवधारणा को कोई महत्त्व नहीं दिया जिसके कारण वैश्य इन सम्प्रदायों की ओर आकर्षित हुए। इसी तरह से ब्राह्मणों के प्रभुत्व से क्षत्रिय समुदाय अर्थात् शासक वर्ग भी नाराज़ था। संक्षेप में समाज में ब्राह्मणों की सर्वोच्चता ने असंतोष उत्पन्न किया और इसी ने नवीन धार्मिक विचारों के उदय में सामाजिक सहयोग प्रदान किया। यह ध्यान देने योग्य बात है कि दोनों बुद्ध तथा महावीर क्षत्रिय समुदाय से थे। मगर जटिल सामाजिक समस्याओं से जूझते हुए वे जन्म द्वारा निर्धारित सीमाओं को पार कर गए। जब हम यह जानने की कोशिश करते हैं कि उस समय के समाज में इनके विचार कितने लोकप्रिय हुए तो हम पाते हैं कि राजाओं, बड़े व्यापारियों, अमीर गृहस्थों, ब्राह्मणों तथा वेश्याओं ने भी उनके विचारों के प्रति उत्साह दिखाया।

वे सभी उस नए समाज का प्रतिनिधित्व करते थे जो लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. में उभर रहा था। तथा बुद्ध, महावीर एवं उस समय के अन्य विचारकों ने अपने-अपने तरीके से एक नई सामाजिक व्यवस्था की समस्याओं का जवाब दिया। इस नई सामाजिक व्यवस्था के लिए वैदिक कर्मकांडी प्रथाओं की प्रासंगिकता समाप्त हो रही थी।

हालांकि प्रचलित धार्मिक सम्प्रदायों की आलोचना करने वालों में बुद्ध एवं महावीर ही पहले नहीं थे। उनसे पहले दूसरे धार्मिक उपदेशकों जैसे कपिल गोसल, मक्रवलि अजिता केशकेबलिन और पकुघ कच्चायन ने वैदिक धर्म में सुधार के लिए उसकी बुराइयों को उजागर किया था। उन्होंने भी ईश्वर एवं जीवन के विषय में नवीन चिन्तन प्रस्तुत किए। नये दर्शनों को भी प्रचारित किया गया। परन्तु बुद्ध और महावीर ने नये वैकल्पिक धर्मों की व्यवस्था को प्रस्तुत किया।

यह वह पृष्ठभूमि थी जिसमें लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. में नवीन धार्मिक व्यवस्थाओं की उत्पत्ति और स्थापना हुई। इन सभी नवीन धार्मिक सम्प्रदायों में बौद्ध सम्प्रदाय तथा जैन सम्प्रदाय सबसे अधिक लोकप्रिय और अच्छी तरह से संगठित थे। अब हम बौद्ध मत और जैन मत के उद्भव तथा विकास का अलग-अलग विवेचन करेंगे।

11.3 गौतम बुद्ध और बौद्ध धर्म की उत्पत्ति

बौद्ध मत की स्थापना गौतम बुद्ध ने की थी। उनके माता-पिता ने उनका नाम सिद्धार्थ रखा था। और उनके पिता शुद्धोधन शाक्य गण के मुखिया थे तथा उनकी माँ का नाम माया था जो कोलिया गण की राजकुमारी थीं। उनका जन्म नेपाल की तराई में स्थित लुम्बिनी (आधुनिक रुमिन्दी) नामक स्थान पर हुआ था। यह जानकारी हमें अशोक के एक स्तम्भ लेख के द्वारा मिलती है। बुद्ध की वास्तविक जन्म तिथि वाद-विवाद का विषय है परन्तु अधिकतर विद्वानों द्वारा इसको लगभग 566 बी.सी.ई. माना गया है। यद्यपि उनका जीवन शाही ठाठ-बाट में व्यतीत हो रहा था। लेकिन यह गौतम के मस्तिष्क को आकर्षित करने में असफल रहा। पारम्परिक स्रोतों के अनुसार एक बूढ़े आदमी, एक बीमार व्यक्ति, एक मृत शरीर तथा एक संन्यासी को देखकर उन्हें बहुत दुःख हुआ। मानव जीवन के दुखों ने गौतम पर गहरा प्रभाव डाला। मानवता को दुखों से मुक्त कराने की खोज में उन्होंने 29 वर्ष की आयु में अपने घर, पत्नी तथा बेटे का परित्याग कर दिया। गौतम ने संन्यासी की भांति घूम-घूमकर छः वर्ष व्यतीत किए। उन्होंने वैशाली के अलारा कालमा से ध्यान करने और उपनिषदों की शिक्षा प्राप्त की। परन्तु उनकी यह शिक्षा गौतम को अन्तिम मुक्ति के लिए राह न दिखा सकी, तो उन्होंने पांच ब्राह्मण संन्यासियों के साथ उनका भी परित्याग कर दिया।

भारत का इतिहास:
प्राचीनतम काल
से लगभग
300 सी.ई. तक



गांधार (पाकिस्तान) की ग्रीको-बौद्ध कला में बुद्ध का प्रतिनिधित्व, पहली-दूसरी शताब्दी सी.ई., टोक्यो राष्ट्रीय संग्रहालय, जापान। श्रेय : वर्ल्ड इमेजिंग (टॉक), 2004।
स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स ([https://en.wikipedia.org/wiki/File:Gandhara_Buddha_\(tnm\).jpeg](https://en.wikipedia.org/wiki/File:Gandhara_Buddha_(tnm).jpeg))।

बुद्ध ने कठोर संयम को अपनाया और सत्य को प्राप्त करने के लिए विभिन्न कठोर यातनाएँ सहन कीं। अंततः इन सबका त्याग करके वे उरुवेला (आधुनिक बोध गया के पास निरंजना नदी के किनारे) गये और एक पीपल के वृक्ष (बौद्ध वृक्ष) के नीचे ध्यान मग्न हो गये। यहाँ अपनी ध्यान अवस्था के उनचासवें दिन उन्हें “सर्वोच्च ज्ञान” की प्राप्ति हुई। तब से उनको “बुद्ध” (ज्ञानी पुरुष) या “तथागत” (वह जो सत्य को प्राप्त करे) कहा जाने लगा। यहाँ से प्रस्थान करके वे वाराणसी के पास सारनाथ में एक हिरन उद्यान पहुँचे जहाँ पर उन्होंने अपना पहला धर्मोपदेश दिया जिसको “धर्मचक्र प्रवर्तन” (धर्म के चक्र को घुमाना) के नाम से जाना जाता है। अश्वजित, उपालि, मोगल्लान सारिपत्र और आनन्द – ये बुद्ध के पहले पाँच शिष्य थे। बुद्ध ने बौद्ध संघ का सूत्रपात किया। उन्होंने अपने अधिकतर धर्मोपदेश श्रावस्ती में दिए। श्रावस्ती का धनी व्यापारी अनथपिण्डिक उनका शिष्य हुआ और उसने बौद्ध मत के लिए उदार दान दिया।



बौद्ध धर्म, जैन धर्म तथा
अन्य धार्मिक विचार

बाएँ : सारनाथ के हिरण उद्यान में बुद्ध अपना पहला उपदेश देते हुए। प्रिंस ऑफ वेल्स संग्रहालय, मुम्बई। श्रेय: ए. के. एस. 1955। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स ([https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Gautama Buddha first sermon in Sarnath.jpg](https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Gautama_Buddha_first_sermon_in_Sarnath.jpg))।

दाएँ : तुषिता स्वर्ग में बुद्ध उपदेश। अमरावती, तेलंगाना में सातवाहन काल (लगभग दूसरी शताब्दी सी.ई.) की कलाकृति। इंडियन म्यूजियम, कलकत्ता में संरक्षित। श्रेय : जी. 41 एम.8। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स ([https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Buddha Preaching in Tushita Heaven. Amaravati, Satavahana period, 2d century AD. Indian Museum, Calcutta.jpg](https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Buddha_Preaching_in_Tushita_Heaven. Amaravati, Satavahana period, 2d century AD. Indian Museum, Calcutta.jpg))।

जल्द ही उन्होंने अपने धर्म प्रवचन के प्रचार के लिए बहुत से स्थानों का भ्रमण करना शुरू कर दिया। वे सारनाथ मथुरा, राजगीर, गया और पाटलिपुत्र गये। बिम्बिसार, अजातशत्रु (मगध), प्रासेनजीत (कोसल) और उदयन (कौशाम्बी) के राजाओं ने उनके सिद्धान्तों को स्वीकार किया तथा वे उनके शिष्य बन गये। वह कपिलवस्तु भी गये और उन्होंने अपनी धाय माता व बेटे राहुल को भी अपने सम्प्रदाय में परिवर्तित किया।

मल्ल गणों की राजधानी कुसि नगर (उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले में स्थित कसिया) में 80 वर्ष की आयु में (486 बी.सी.ई.) बुद्ध की मृत्यु हो गई।



कुशीनगर का स्तूप जहाँ बुद्ध के अस्थि अवशेष रखे हैं। श्रेय : प्रिंस रॉय। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स ([https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Buddha%27s cremation stupa, Kushinagar.jpg](https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Buddha%27s_cremation_stupa, Kushinagar.jpg))।

आइए अब बुद्ध की उन शिक्षाओं का विवेचन करें जो लोकप्रिय हुईं और जिन्होंने उस समय के धार्मिक विचारों को नवीन दिशा प्रदान की।

11.4 बुद्ध के उपदेश



बाएँ : अभय-मुद्रा में बैठे बुद्ध, कुषाण काल (पहली-तीसरी शताब्दी सी.ई.), मथुरा संग्रहालय, उत्तर प्रदेश। श्रेय : बिस्वरूप गांगुली। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स ([https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Inscribed Seated Buddha Image in Abhaya Mudra - Kushan Period - Katra Keshav Dev - ACCN A-1 - Government Museum - Mathura 2013-02-24 5972.JPG](https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Inscribed_Seated_Buddha_Image_in_Abhaya_Mudra_-_Kushan_Period_-_Katra_Keshav_Dev_-_ACCN_A-1_-_Government_Museum_-_Mathura_2013-02-24_5972.JPG))।

मध्य : बुद्ध, लगभग चौथी शताब्दी सी.ई., अमरावती पुरातत्व संग्रहालय, तेलंगाना। श्रेय : बिस्वरूप गांगुली। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स ([https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Buddha - Limestone - Circa 4th Century AD - Amravati - Archaeological Museum - Amravati - Andhra Pradesh - Indian Buddhist Art - Exhibition - Indian Museum - Kolkata 2012-12-21 2342.JPG](https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Buddha_-_Limestone_-_Circa_4th_Century_AD_-_Amravati_-_Archaeological_Museum_-_Amravati_-_Andhra_Pradesh_-_Indian_Buddhist_Art_-_Exhibition_-_Indian_Museum_-_Kolkata_2012-12-21_2342.JPG))।

दाएँ : उपदेश देते हुए बुद्ध (गुप्त काल)। स्रोत : ई.एच.आई.-02, खंड-4, इकाई-17।

बुद्ध के मूलभूत उपदेश निम्नलिखित में संकलित हैं :

क) चार पवित्र सत्य, और

ख) अष्टांगिक मार्ग

क) निम्नलिखित चार पवित्र सत्य हैं :

- संसार दुःखों से परिपूर्ण है।
- सारे दुःखों का कोई न कोई कारण है। इच्छा, अज्ञान और मोह मुख्यतः दुःख के कारण हैं।
- इच्छाओं का अन्त मुक्ति का मार्ग है।
- मुक्ति (दुःखों से छुटकारा पाना) अष्टांगिक मार्ग द्वारा प्राप्त की जा सकती है।

ख) अष्टांगिक मार्ग में निम्नलिखित सिद्धांत समाहित हैं :

- सम्यक् दृष्टि : इसका अर्थ है कि इच्छा के कारण ही इस संसार में दुःख व्याप्त है। इच्छा का परित्याग ही मुक्ति का मार्ग है।

- ii) सम्यक् संकल्प : यह लिप्सा और विलासिता से छुटकारा दिलाता है। इसका उद्देश्य मानवता को प्रेम करना और दूसरों को प्रसन्न रखना है।
- iii) सम्यक् वाचन अर्थात् सदैव सच बोलना।
- iv) सम्यक् कर्म : इसका तात्पर्य है स्वार्थरहित कार्य करना।
- v) सम्यक जीविका : अर्थात् व्यक्ति को ईमानदारी से अर्जित साधनों द्वारा जीवन-यापन करना चाहिए।
- vi) सम्यक प्रयास : इससे तात्पर्य है कि किसी को भी बुरे विचारों से छुटकारा पाने के लिए इन्द्रियों पर नियंत्रण होना चाहिए। कोई भी मानसिक अभ्यास के द्वारा अपनी इच्छाओं एवं मोह को नष्ट कर सकता है।
- vii) सम्यक् स्मृति : इसका अर्थ है कि शरीर नश्वर है और सत्य का ध्यान करने से ही सांसारिक बुराइयों से छुटकारा पाया जा सकता है।
- viii) सम्यक् समाधि : इसका अनुसरण करने से शान्ति प्राप्त होगी। ध्यान से ही वास्तविक सत्य प्राप्त किया जा सकता है।

बौद्ध मत ने कर्म के सिद्धान्त पर बल दिया, जिसके अनुसार वर्तमान निर्णय भूतकाल के कार्य करते हैं। किसी व्यक्ति की इस जीवन और अगले जीवन की दशा उसके कर्मों पर निर्भर करती है। प्रत्येक व्यक्ति स्वयं अपने भाग्य का निर्माता है। अपने कर्मों को भोगने के लिए हम बार-बार जन्म लेते हैं। अगर कोई व्यक्ति किसी भी तरह का पाप नहीं करता है तो उसका पुनर्जन्म नहीं होगा। इस प्रकार बुद्ध के उपदेशों का अनिवार्य तत्व या सार “कर्म दर्शन” है। बुद्ध ने निर्वाण का प्रचार किया। उनके अनुसार यही प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का अंतिम उद्देश्य है। इसका तात्पर्य है सभी इच्छाओं से छुटकारा, दुःखों का अन्त जिससे अन्ततः पुनर्जन्म से मुक्ति मिलती है। इच्छाओं की समाप्ति की प्रक्रिया के द्वारा कोई भी निर्वाण पा सकता है। इसलिए बुद्ध ने उपदेश दिया कि इच्छा को समाप्त करना ही वास्तविक समस्या है। पूजा और बलि इच्छा को समाप्त नहीं कर सकेंगे। इस प्रकार वैदिक धर्म में होने वाले अनुष्ठानों एवं यज्ञों के विपरीत बुद्ध ने व्यक्तिगत नैतिकता पर बल दिया। बुद्ध ने न ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकारा और न ही नकारा। यह व्यक्ति और उसके कार्यों के विषय में अधिक चिन्तित थे। बौद्ध मत ने आत्मा के अस्तित्व को भी स्वीकार नहीं किया।

इनके अतिरिक्त बुद्ध ने अन्य पक्षों पर भी बल दिया :

- बुद्ध ने प्रेम की भावना पर बल दिया। अहिंसा का अनुसरण करके प्रेम को सभी प्राणियों पर अभिव्यक्त किया जा सकता है। यद्यपि अहिंसा के सिद्धांत को बौद्ध मत में अच्छी तरह से समझाया गया था, परन्तु इसको इतना महत्त्व नहीं दिया गया जितना कि जैन मत में।
- व्यक्ति को मध्य मार्ग का अनुसरण करना चाहिए। कठोर संन्यास एवं विलासी जीवन दोनों से बचना चाहिए।

महात्मा बुद्ध की शिक्षा ने उस समय के ब्राह्मणवादी विचारों के सामने एक गम्भीर चुनौती प्रस्तुत की।

- i) बुद्ध के उदार व लोकतांत्रिक विचारों ने सभी समुदायों के लोगों को शीघ्रता से आकर्षित किया। जाति व्यवस्था और पुजारियों की सर्वोच्चता पर बुद्ध के द्वारा किये गये प्रहारों का समाज की नीची जाति के लोगों ने स्वागत किया। सभी जाति तथा लिंग के लोग

बौद्ध सम्प्रदाय को अपना सकते थे। बौद्ध मत के अनुसार व्यक्ति की मुक्ति उसके अच्छे कार्यों के द्वारा ही सम्भव है। इसलिए, निर्वाण अर्थात् जीवन के अंतिम लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए किसी पुजारी या मध्यस्थ की आवश्यकता नहीं होती।

- ii) बुद्ध ने वेदों की सर्वोच्चता के सिद्धान्त तथा पशु-बलि का विरोध किया। उन्होंने अर्थ-विहीन तथा व्यर्थ अनुष्ठानों का बहिष्कार किया। उन्होंने कहा कि देवताओं को बलि देने से पापों को नहीं धोया जा सकता और न ही किसी पुजारी के पूजा करने से किसी पापी को लाभ होता है। इस प्रकार बुद्ध ने सामाजिक समानता के सिद्धान्तों पर बल दिया।

बौद्ध धर्म का थोड़े ही समय में एक संगठित धर्म के रूप में उद्भव हुआ और बुद्ध के उपदेशों को संग्रहीत किया गया। बौद्ध धर्म के इस संग्रहीत साहित्य (उपदेशों का संग्रह-पिटक) को तीन भागों में बांटा गया है :

- i) सुत्त-पिटक में पांच निकाय हैं जिनमें धार्मिक सम्भाषण तथा बुद्ध के संवाद संकलित हैं। पांचवें निकाय में जातक कथाएँ (बुद्ध के पूर्व जन्मों से सम्बद्ध कहानियाँ) हैं।
- ii) विनय पिटक में भिक्षुओं के अनुशासन से संबंधित नियम हैं।
- iii) अभिधम्म-पिटक में बुद्ध के दार्शनिक विचारों का विवरण है। इन्हें प्रश्न-उत्तर के रूप में लिखा गया है।

11.5 बौद्ध मत का विकास

अब हम उन कारणों पर प्रकाश डालेंगे जिन्होंने बौद्ध मत के विकास में योगदान दिया और उसको एक लोकप्रिय धर्म बनाया।

11.5.1 बौद्ध मत का विस्तार



अशोक के शासनकाल के दौरान बौद्ध दूत-कर्मों का नक्शा। श्रेय : जेवियर एफ.वी. 1212।
स्रोत: विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Asoka%CC%80Buddhist_Missions.png)।

इसके संस्थापक के जीवन काल में ही बड़ी संख्या में लोगों ने बौद्ध मत को स्वीकार कर लिया था। उदाहरण के लिए मगध, कोसल और कौशाम्बी की जनता ने बौद्ध मत को स्वीकार किया। शाक्य, वज्जि और मल्ल जनपदों की जनता ने भी इसका अनुसरण किया। अशोक

एवं कनिष्क ने बौद्ध मत को राज्य धर्म बनाया और यह मध्य एशिया, पश्चिम एशिया और श्रीलंका में भी फैला।

बौद्ध धर्म, जैन धर्म तथा
अन्य धार्मिक विचार

बौद्ध मत जनता के बड़े हिस्सों में लोकप्रिय होने के निम्नलिखित कारण थे :

- व्यावहारिक नैतिकता पर बल देना, मानव जाति की समस्याओं का सहज स्वीकृत समाधान और साधारण दर्शन ने जनता को बौद्ध मत की ओर आकर्षित किया।
- बौद्ध धर्म में संकलित सामाजिक समानता के विचारों के कारण साधारण जनता ने बौद्ध मत को स्वीकार किया।
- अनथपिण्डिक जैसे व्यापारी और आम्रपाली जैसी देवदासी ने इस मत को स्वीकार किया क्योंकि उन्होंने इस धर्म में उचित सम्मान प्राप्त किया।
- विचारों को व्यक्त करने के लिए लोकप्रिय भाषा *पाली* के प्रयोग ने भी धर्म के विस्तार में मदद दी। संस्कृत का प्रयोग करने के कारण ब्राह्मण धर्म सीमा में बंध गया था क्योंकि यह जन-भाषा नहीं थी।
- राजाओं के द्वारा संरक्षण प्रदान किये जाने के कारण बौद्ध धर्म का विस्तार तेजी के साथ हुआ। उदाहरण के लिए, ऐसी धारणा है कि अशोक ने अपने पुत्र महेन्द्र तथा पुत्री संगमित्रा को श्रीलंका में बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए भेजा। उसने बहुत से बौद्ध विहारों को स्थापित किया और *संघ* के लिए उदार भाव से दान आदि भी दिया।
- बौद्ध मत को प्रभावशाली ढंग से फैलाने में *संघ* की संस्था ने संगठित रूप से योगदान दिया।



सामान्य जन बुद्ध-पादों (बुद्ध के पदचिह्नों) की पूजा करते हुए। लगभग दूसरी शताब्दी सी. ई.। अमरावती पुरातत्व संग्रहालय, गुंटूर, जिला, तेलंगाना। श्रेय : कृष्ण चैतन्य वेलगा।
स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स ([https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Worship_scenes_stone at ASI Museum, Amaravathi.jpg](https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Worship_scenes_stone_at_ASI_Museum,_Amaravathi.jpg))।

11.5.2 बौद्ध-संघ (संस्था के रूप में)



एक प्रारंभिक बौद्ध त्रय। बाएँ से दाएँ : एक कुषाण भक्त, बोधिसत्व मैत्रेय, बुद्ध, बोधिसत्व अवलोकितेश्वर और एक बौद्ध भिक्षु। दूसरी-तीसरी शताब्दी, गांधार। श्रेय : कोई पठनीय अपलोड प्रदान नहीं किया गया। विश्व इमेजिंग माना गया (प्रतिलिप्याधिकार/सत्त्वाधिकार दावों के आधार पर)। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स (<https://commons.wikimedia.org/wiki/File:BuddhistTriad.JPG>)।

संघ बौद्ध मत की धार्मिक अवस्था थी। यह एक अच्छे प्रकार से संगठित एवं शक्तिशाली संस्था थी और इसने बौद्ध को लोकप्रिय बनाया। 15 वर्ष से अधिक की आयु वाले सभी नागरिकों के लिए इसकी सदस्यता खुली थी चाहे वे किसी भी जाति के हों। किन्तु अपराधी, कुष्ठ रोगी तथा संक्रामक रोग से पीड़ित लोगों को संघ की सदस्यता नहीं दी जाती थी। प्रारम्भ में गौतम बुद्ध महिलाओं को संघ का सदस्य बनाने के पक्ष में नहीं थे। लेकिन उनके मुख्य शिष्य आनन्द एवं उनकी धाय माँ महाप्रजापति गौतमी के लगातार निवेदन करने पर उन्होंने उनको संघ में प्रवेश दिया।

भिक्षुओं को प्रवेश लेने पर विधिपूर्वक अपना मुंडन कराना एवं पीले या गेरुए रंग का लिबास पहनना पड़ता था। उनसे आशा की जाती थी कि वे नित्य बौद्ध मत के प्रचार के लिए जायेंगे और भिक्षा प्राप्त करेंगे। वर्षा ऋतु के चार महीनों के दौरान वे एक निश्चित निवास स्थान बनाते थे और ध्यान करते थे। इसको आश्रय या वास कहा जाता था। संघ लोगों को शिक्षा देने का भी काम करता था। ब्राह्मणवाद के विपरीत बौद्ध मत में समाज के सभी लोग शिक्षा ग्रहण कर सकते थे। स्वाभाविक रूप से जिन लोगों को ब्राह्मणों ने शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार से वंचित कर दिया था उनको बौद्ध मत में शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हो गया और इस प्रकार शिक्षा समाज के काफी तबकों में फैल गई।

संघ का संचालन जनतांत्रिक सिद्धान्तों के अनुसार होता था और अपने सदस्यों को अनुशासित करने की शक्ति भी इसी में निहित थी। यहाँ पर भिक्षुओं एवं भिक्षुणियों के लिए एक आचार-संहिता थी और वे इसका पालन करते थे। गलती करने वाले सदस्य को संघ दण्डित कर सकता था।

11.5.3 बौद्ध मत की सभायें

अनुश्रुतियों के अनुसार बुद्ध की मृत्यु के कुछ समय बाद 483 बी.सी.ई. में राजगृह के पास सप्तपर्णि गुफा में बौद्ध मत की प्रथम सभा हुई। इस सभा की अध्यक्षता, महाकस्यप ने की। बुद्ध की शिक्षा को पिटकों में विभाजित किया गया, जिनके नाम इस प्रकार हैं :

क) विनय-पिटक और

ख) सुत्त-पिटक

बौद्ध धर्म, जैन धर्म तथा
अन्य धार्मिक विचार

विनय-पिटक की रचना उपाली के नेतृत्व में की गई और सुत्त-पिटक की रचना आनन्द के नेतृत्व में की गई।



प्रथम बौद्ध परिषद। नव जेटावन मंदिर, श्रावस्ती, उत्तर प्रदेश में भित्ति चित्र। श्रेय : फोटो धर्म।
स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स ([https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Nava_Jetavana_Temple_-_Shravasti_-_013_First_Council_at_Rajagaha_\(9241729223\).jpg](https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Nava_Jetavana_Temple_-_Shravasti_-_013_First_Council_at_Rajagaha_(9241729223).jpg))।

दूसरी सभा का आयोजन 393 बी.सी.ई. में वैशाली में हुआ। पाटलीपुत्र तथा वैशाली के भिक्षुओं ने कुछ नियमों का निर्धारण किया परन्तु इन नियमों की कौशाम्बी व अवन्ति के भिक्षुओं के द्वारा बुद्ध की शिक्षा के प्रतिकूल घोषित कर दिया गया। दोनों विरोधी गुटों के बीच कोई भी समझौता कराने में सभा असफल रही। बौद्ध धर्म का विभाजन स्थायी तौर पर दो बौद्ध सम्प्रदायों-स्थविरवादी व महासंघिक में हुआ। पहले सम्प्रदाय ने विनय-पिटक में वर्णित रुढ़िवादी विचारों को अपनाया और दूसरे ने नये नियमों का समर्थन किया और फिर उनमें परिवर्तन किए।

तीसरी सभा का आयोजन अशोक के शासनकाल में मोग्गालिपुत्ततित्स की अध्यक्षता में पाटलिपुत्र में किया गया। इस सभा में सिद्धान्तों की दार्शनिक विवेचना को संकलित किया गया तथा इसको अभिधम्म-पिटक के नाम से जाना जाता है। इस सभा में बौद्धमत को असंतुष्टों एवं नये परिवर्तनों से युक्त कराने का प्रयोग किया गया। 60,000 “पथभ्रष्ट” भिक्षुओं को बौद्ध मत से इस सभा द्वारा निष्कासित कर दिया गया। सप्त उपदेशों के साहित्य को परिभाषित किया गया तथा आधिकारिक तौर पर विघ्न पैदा करने वाली प्रवृत्तियों से भी निपटा गया।

चौथी सभा का आयोजन कश्मीर में कनिष्क के शासन काल में हुआ। इस सभा में उत्तरी भारत के हीनयान सम्प्रदाय को मानने वाले एकत्रित हुए। तीन पिटकों पर तीन टीकाओं (भाष्यों) का संकलन इस सभा द्वारा किया गया। इसने उन विवादग्रस्त मतभेद वाले प्रश्नों का निपटारा किया जो श्रीवस्तीवादियों एवं कश्मीर तथा गन्धार के प्रचारकों के मध्य उत्पन्न हो गये थे।

11.5.4 बौद्ध धर्म के सम्प्रदाय

वैशाली में आयोजित दूसरी सभा में, बौद्ध धर्म का निम्न दो सम्प्रदायों में विभाजन हुआ :

क) स्थविरवादी

ख) महासंघिक

भारत का इतिहास:
प्राचीनतम काल
से लगभग
300 सी.ई. तक

स्थविरवादी धीरे-धीरे ग्यारह सम्प्रदायों और महासंघिक सात सम्प्रदायों में बंट गये थे।

अठ्ठारह सम्प्रदाय हीनयान मत में संगठित हुए। स्थविरवादी कठोर भिक्षुक जीवन और मूल निर्देशित कड़े अनुशासित नियमों का अनुसरण करते थे। वह समूह जिसने संशोधित नियमों को माना, वह महासंघिक कहलाया।

महायान सम्प्रदाय का विकास चौथी बौद्ध सभा के बाद हुआ। हीनयान सम्प्रदाय, जो बुद्ध की रूढ़िवादी शिक्षा में विश्वास करता था। इनका जिस गुट ने विरोध किया और जिन्होंने नये विचारों को स्वीकार किया, वे लोग महायान सम्प्रदाय के समर्थक कहलाये। उन्होंने बुद्ध की प्रतिमा बनायी और ईश्वर की भांति उसकी पूजा की। लगभग प्रथम सदी सी.ई. में कनिष्क के शासन काल के दौरान कुछ सैद्धांतिक परिवर्तन किए गए।

बोध प्रश्न 1

1) निर्वाण एवं कर्म के बौद्धवादी दर्शन की विवेचना कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) बौद्ध धर्म के विकास के लिए उत्तरदायी कारण क्या थे?

.....

.....

.....

.....

.....

3. निम्नलिखित कथनों पर सही (✓) या गलत (×) का निशान लगाइए :

- i) बढ़ते व्यापार एवं वाणिज्य ने विधर्मिक विचारों के उद्भव में मदद की। ()
- ii) बुद्ध ने अपना प्रथम उपदेश बोध गया में दिया। ()
- iii) बुद्ध ने कठोर संन्यासी जीवन का प्रचार किया। ()
- iv) बुद्ध पुनर्जन्म में विश्वास नहीं करते थे। ()
- v) बुद्ध ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास करते थे। ()

11.6 जैन धर्म की उत्पत्ति

जैन श्रुतियों के अनुसार, जैन धर्म की उत्पत्ति एवं विकास के लिए 24 तीर्थंकर उत्तरदायी थे। इनमें से पहली बाईस की ऐतिहासिकता संदिग्ध है। परन्तु अन्तिम तीर्थंकर पार्श्वनाथ और महावीर की ऐतिहासिकता को बौद्ध ग्रंथों ने भी प्रमाणित किया है।

11.6.1 पार्श्वनाथ

बौद्ध धर्म, जैन धर्म तथा
अन्य धार्मिक विचार

जैन श्रुतियों के अनुसार 23वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ बनारस के राजा अश्वसेन एवं रानी वामा के पुत्र थे। उन्होंने 30 वर्ष की आयु में सिंहासन का परित्याग कर दिया और वे संन्यासी हो गए। 84 दिन की तपस्या के उपरान्त उनको ज्ञान की प्राप्ति हुई। उनकी मृत्यु महावीर से लगभग 250 वर्ष पहले सौ वर्ष की आयु में हुई। वह “पदार्थ” की अनन्ता में विश्वास करते थे। वह अपने पीछे अपने समर्थकों की काफी बड़ी संख्या छोड़ गए। उनके शिष्य सफेद वस्त्रों को धारण करते थे। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि महावीर से पूर्व भी किसी न किसी रूप में जैन धर्म का अस्तित्व था।

11.6.2 महावीर



बाएँ : वर्धमान महावीर की मूर्ति, कीजाकुइलकुडी, मदुरै, तमिलनाडु। श्रेय : फ्रांसिस हैरी रॉय एस। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Vardhaman_Keezhakuvilkudi.jpg)।

दाएँ : हवा में मेंडराते और मालाएँ भेंट करते देवों (स्वर्ग के प्राणियों) के साथ महावीर। स्रोत : “द जैन स्तूप एण्ड अदर ऐंटीक्यूटीज ऑफ मथुरा (<https://archive.org/details/cu31924012251140>)। श्रेय : वी.ए. स्मिथ। चित्र सौजन्य : विकिमीडिया कॉमन्स (<https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Vardhaman.jpg>)।

24वें तीर्थंकर वर्धमान महावीर थे। उनका जन्म कुण्डग्राम (वासुकुण्ड), वैशाली के पास (जिला मुजफ्फरपुर, बिहार) में 540 बी.सी.ई. में हुआ था। उनके पिता सिद्धार्थ शात्रक क्षत्रिय गण के मुखिया थे। उनकी माता लिच्छिवी राजकुमारी थी, जिनका नाम त्रिशाला था। वर्धमान ने अच्छी शिक्षा प्राप्त की और उनका विवाह यशोदा के साथ हुआ। उससे उन्हें एक पुत्री थी। 30 वर्ष की आयु में महावीर ने अपने घर का परित्याग किया और वह संन्यासी हो गये। पहले उन्होंने एक वस्त्र धारण किया और फिर उसका भी 13 मास के उपरान्त परित्याग कर दिया तथा बाद में वे “नग्न भिक्षु” की भांति भ्रमण करने लगे। घोर तपस्या करते हुए 12 वर्ष तक उन्होंने एक संन्यासी का जीवन व्यतीत किया। अपनी तपस्या के 13वें वर्ष में 42 वर्ष की आयु में उनको “सर्वोच्च ज्ञान” (केवलिन) की प्राप्ति हुई। बाद में उनकी प्रसिद्धि “महावीर (सर्वोच्च योद्धा)” या जिन (विजयी) के नामों से हुई। उनको निग्रंथ (बन्धनों से मुक्त) के नाम से भी जाना जाता था। अगले 30 वर्षों तक वह एक स्थान से दूसरे स्थान पर भ्रमण करते रहे और कोसल, मगध तथा अन्य पूर्वी क्षेत्रों में अपने विचारों का प्रचार किया। वह एक वर्ष में आठ माह विचरण करते थे और वर्षा ऋतु के चार माह पूर्वी भारत के किसी प्रसिद्ध नगर में व्यतीत

करते। वह अक्सर बिम्बिसार तथा अजातशत्रु के दरबारों में भी जाते थे। उनकी मृत्यु 72 वर्ष की आयु में पटना के समीप पावा नामक स्थान पर 486 बी.सी.ई. में हुई।

11.7 महावीर की शिक्षायें

महावीर ने पार्श्वनाथ द्वारा प्रतिपादित किए गए धार्मिक विचारों को ही अधिकतर स्वीकार किया। तथापि उन्होंने उनमें कुछ संशोधन किया और कुछ जोड़ा।

पार्श्वनाथ ने निम्नलिखित चार सिद्धान्तों का प्रचार किया था :

- क) सत्य
- ख) अहिंसा
- ग) किसी प्रकार की कोई सम्पत्ति न रखना,
- घ) स्वेच्छा से नहीं दी गई किसी भी वस्तु को ग्रहण न करना।

इसी में महावीर ने ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना भी जोड़ दिया। उनका विश्वास था कि आत्मा (जीव) व पदार्थ (अजीव) अस्तित्व के दो मूलभूत तत्व हैं। जिनके अनुसार पूर्व जन्मों की इच्छाओं के कारण आत्मा दासत्व की स्थिति में है। लगातार प्रयासों के माध्यम से आत्मा की मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। यही आत्मा की अन्तिम मुक्ति (मोक्ष) है। मुक्त आत्मा फिर “पवित्र/शुद्ध आत्मा” बन जाती है।

जैन धर्म के अनुसार मानव अपने भाग्य का स्वयं रचयिता है और वह पवित्र, सदाचारी एवं आत्म-त्यागी जीवन का अनुसरण करके ही मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। निम्नलिखित तीन सिद्धान्तों (तीन गुणव्रत) का अनुसरण करके मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त किया जा सकता है :

- i) उचित विश्वास
- ii) उचित ज्ञान, और
- iii) उचित कार्य

निर्वाण अर्थात् आध्यात्मिकता की सर्वोच्च स्थिति को प्राप्त करने के लिए उन्होंने घोर वैराग्य और कड़ोर तपस्या पर जोर दिया। उनका विश्वास था कि सृष्टि की रचना किसी सर्वोच्च शक्ति के द्वारा नहीं की गयी। उत्थान-पतन के अनादि नियमों के अनुसार सृष्टि कार्य करती है। उनका विचार था कि सभी चेतन या अवचेतन वस्तुओं में आत्मा का वास है। उनका विश्वास था कि वे सभी पीड़ा अथवा चोट के प्रभाव को महसूस करते हैं। उन्होंने वेदों के प्रभुत्व का तिरस्कार किया और वैदिक अनुष्ठानों तथा ब्राह्मणों की सर्वोच्चता का भी विरोध किया। गृहस्थों एवं भिक्षुओं, दोनों के लिए आचार-संहिता को अनुसरणीय बताया। बुरे कर्मों से बचने के लिए एक गृहस्थ को निम्नलिखित पांच व्रतों का पालन करना चाहिए :

- i) परोपकारी होना,
- ii) चोरी न करना,
- iii) व्याभिचार से बचना
- iv) सत्य वचन, और
- v) आवश्यकता से अधिक धन संग्रह न करना।

उन्होंने यह निर्देशित किया कि प्रत्येक गृहस्थ को जरूरतमंदों को प्रत्येक दिन पका हुआ भोजन खिलाना चाहिए। उन्होंने प्रचारित किया कि उनके अनुयायियों को कृषि कार्य नहीं करना चाहिए क्योंकि इस कार्य में पेड़-पौधे एवं जन्तुओं का विनाश हो जाता है। एक भिक्षु को कठोर नियमों का पालन करना पड़ता था। उसको सभी सांसारिक चीजों का परित्याग करना होता था। उसको अपने सिर के प्रत्येक बाल को अपने हाथों से उखाड़ना होता था। वह केवल दिन के समय ही चल सकता था जिससे कि किसी भी प्रकार से जीव हत्या न हो या उनको कोई भी हानि न पहुँचे। उनको स्वयं को इस प्रकार से प्रशिक्षित करना होता था कि वे अपनी ज्ञानेन्द्रियों पर पूर्ण नियंत्रण कर सकें। जैन धर्म का विश्वास था कि मोक्ष प्राप्ति के लिए एक भिक्षु का जीवन अनिवार्य था। और एक गृहस्थ इसको प्राप्त नहीं कर सकता था।

अनुश्रुतियों के अनुसार महावीर द्वारा शिक्षित किए गए मूल सिद्धान्तों को 14 ग्रंथों में संकलित किया गया था, जिनको पूर्व के नाम से जाना जाता है। पाटलिपुत्र के प्रथम सभा में स्थूलभद्र ने जैन धर्म को 12 अंगों में विभाजित किया इनको श्वेताम्बर सम्प्रदाय ने स्वीकार किया। परन्तु दिगम्बर सम्प्रदाय के लोगों ने यह कहकर इसे मानने से इंकार कर दिया कि सभी पुराने धर्म ग्रंथ खो चुके हैं। दूसरी सभा का आयोजन वल्लभि में हुआ और इसमें उपंगों के नाम से नयी श्रुतियों को जोड़ा गया। 12 अंगों में आचारंग सूत्र और भगवती सूत्र सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। पहले में उन नियमों का वर्णन है जिनका जैन भिक्षुओं को अनुसरण करना चाहिए, दूसरे में जैन धर्म के सिद्धान्तों का व्यापक रूप से वर्णन किया गया है।

11.8 जैन धर्म का विकास

महावीर की शिक्षाएँ जनता के बीच बड़ी लोकप्रिय हुई और समाज के विभिन्न तबके इसकी ओर आकर्षित हुए। बौद्ध धर्म की भांति जैन धर्म में भी समय-समय पर परिवर्तन होते रहे। अब हम देखेंगे कि इस धर्म के विस्तार में किन कारकों ने योगदान दिया और क्या विकास हुए?

11.8.1 जैन धर्म का विस्तार

महावीर के 11 शिष्य थे जिनको गणधर अर्थात् सम्प्रदायों का प्रमुख कहा जाता था। आर्य सुधर्मा अकेला ऐसा गणधर था जो महावीर की मृत्यु के पश्चात् भी जीवित रहा और जो जैन धर्म का प्रथम थेरा अर्थात् उपदेशक हुआ। उसकी मृत्यु महावीर की मृत्यु के 20 वर्ष पश्चात् हुई। राजा नन्द के काल में जैन धर्म के संचालन का कार्य दो थेरों (आचार्यों) द्वारा किया गया था:

- i) सम्भूताविजय, और
- ii) भद्रबाहु

छठे थेरा (आचार्य) भद्रबाहु मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के समकालीन थे। धीरे-धीरे महावीर के समर्थक संपूर्ण क्षेत्र में फैल गए। जैन धर्म को शाही संरक्षण की कृपा भी रही। जैन अनुश्रुतियों के अनुसार अजातशत्रु का उत्तराधिकारी उदयन जैन धर्म का अनुयायी था। सिकन्दर के भारत पर आक्रमण के समय जैन भिक्षुओं को सिन्धु नदी के किनारे पाया गया था। चन्द्रगुप्त मौर्य जैन धर्म का अनुयायी था और उसने भद्रबाहु के साथ दक्षिण की ओर प्रवास किया तथा जैन धर्म का प्रचार किया। पहली सदी सी.ई. में मथुरा एवं उज्जैन जैन धर्म के प्रभाव केंद्र बने।

बौद्ध धर्म की तुलना में जैन धर्म की सफलता शानदार थी। इसकी सफलता का एक मुख्य कारण था कि महावीर एवं उसके अनुयायियों ने संस्कृत के स्थान पर लोकप्रिय प्राकृत का प्रयोग किया। जैन धार्मिक साहित्य को अर्धमगधी में भी लिखा गया। जनता के लिए सरल एवं घरेलू निर्देशों ने लोगों को आकर्षित किया। जैन धर्म को राजाओं के द्वारा संरक्षण दिये जाने के कारण भी लोगों के मस्तिष्क में इसका स्थान बना।

11.8.2 जैन सभायें

चन्द्रगुप्त मौर्य के शासन की समाप्ति के समीप दक्षिण बिहार में भयंकर अकाल पड़ा। यह 12 वर्षों तक चला। भद्रबाहु और उनके शिष्यों ने कर्नाटक राज्य में ऋवणबेलगोल की ओर विस्थापन किया। अन्य जैन मुनि स्थूलभद्र के नेतृत्व में मगध में ही रह गए। उन्होंने पाटलिपुत्र में 300 बी.सी.ई. के आस-पास सभा का आयोजन किया जिसमें इस सभा में महावीर की पवित्र शिक्षाओं को 12 अंगों में विभाजित किया गया।

दूसरी जैन सभा का आयोजन 512 सी.ई. में गुजरात में वल्लमी नामक स्थान पर देवर्षि क्षेमासरमण की अध्यक्षता में किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य पवित्र ग्रंथों को एकत्र एवं उनको पुनः क्रम से संकलित करना था। किन्तु प्रथम सभा में संकलित बारहवां अंग इस समय खो गया था। शेष बचे हुए अंगों को अर्धमगधी में लिखा गया।

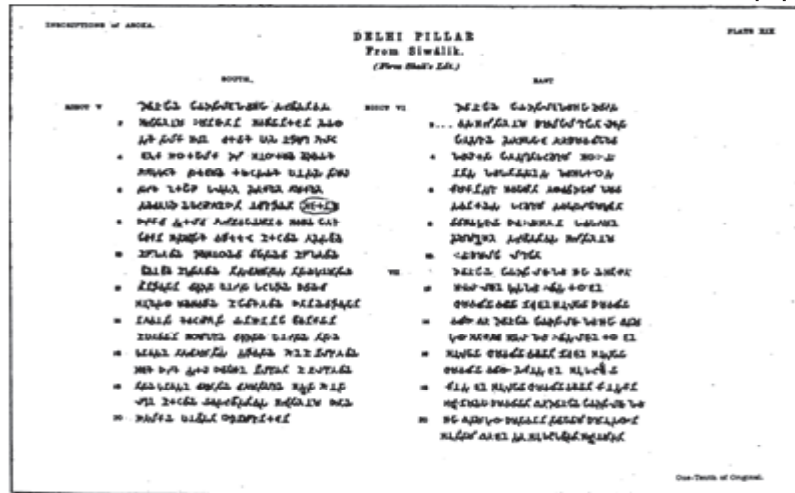
11.8.3 सम्प्रदाय

जैन धर्म में फूट पड़ने का समय लगभग 300 बी.सी.ई. माना जाता है। महावीर के समय में ही एक वस्त्र धारण करने को लेकर मतभेद स्पष्ट होने लगे थे। श्रवणबेलगोल से मगध वापस लौटने के बाद भद्रबाहु के अनुयायियों ने इस निर्णय को मानने से इंकार कर दिया कि 14 पर्वा खो गये थे। मगध में ठहरने वालों तथा प्रस्थान करने वालों में मतभेद बढ़ते ही गये। मगध में ठहरने वाले सफेद वस्त्रों को धारण करने के अभ्यस्त हो चुके थे और वे महावीर की शिक्षाओं से दूर होने लगे, जबकि पहले वाले नग्न अवस्था में रहते और कठोरता से महावीर की शिक्षाओं का अनुसरण करते। अतः जैन धर्म का प्रथम विभाजन दिगम्बर (नग्न रहने वालों) और श्वेताम्बर (सफेद वस्त्र धारण करने वालों) के बीच हुआ।

अगली शताब्दियों में पुनः दोनों सम्प्रदायों में कई विभाजन हुए। इनमें महत्वपूर्ण वह सम्प्रदाय था जिसने मूर्ति-पूजा को त्याग दिया और ग्रंथों की पूजा करने लगे। वे श्वेताम्बर सम्प्रदाय में थेरापन्थी कहलाए और दिगम्बर सम्प्रदाय में समैयास कहलाए। यह सम्प्रदाय छठी शताब्दी सी.ई. के आसपास अस्तित्व में आया।

11.9 अन्य विधार्मिक विचार

इस काल में वैदिक धर्म से भिन्न दूसरे अन्य विचार भी प्रचलित थे। बाद में यह छोटे सम्प्रदायों के रूप में सामने आये। उनमें आजीवक सम्प्रदाय के अनुयायियों की संख्या काफी अधिक थी और ये भली-भांति संगठित थे।



बाएँ : संभवतः आजीवक संन्यासियों को दर्शाता खपरा/खपरैल, लगभग चौथी शताब्दी, जम्मू और कश्मीर से प्राप्त/लॉस एंजिल्स काउंटी म्यूजियम ऑफ आर्ट, कैलिफोर्निया में संरक्षित।
स्रोत : http://collections.lacma.org/sites/default/files/remote_images/piction/ma-31397564-O3.jpg। चित्र सौजन्य : विकिमीडिया कॉमन्स ([https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Tile_with_Ajivaka_\(%3F\)_Ascetics_LACMA_M.82.152.jpg](https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Tile_with_Ajivaka_(%3F)_Ascetics_LACMA_M.82.152.jpg))।

दाएँ : आजीवक संप्रदाय का विवरण देता अशोक का सातवां स्तम्भ अभिलेख, लगभग तीसरी शताब्दी बी.सी.ई। स्रोत : <https://archive.org/details/inscriptionsaso00hultgoog>। श्रेय : अशोक, अलेक्जेंडर कनिंघम, यूजेन हॉल्डज़च। चित्र : सौजन्य विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Ashoka_pillar_delhi2.png)।

आजीवकों के विषय में कहा जाता है कि वे शूद्र संन्यासी थे। ऐसा कहा जाता है कि इस सम्प्रदाय का संस्थापक नन्द वच्च था। जिसका अनुसरण किस संकिच्च के द्वारा किया गया। तीसरा धार्मिक प्रमुख मक्खलि गोसल अथवा मंथलिपुत्र गोशाल था, जिसने इस सम्प्रदाय को लोकप्रिय बनाया। उसने कर्म की अवधारणा को नकारा और तर्क दिया कि मनुष्य नियति के अधीन है। आजीवक विश्वास करते थे कि किसी व्यक्ति के विचार एवं कार्य पहले ही निश्चित हो जाते हैं। (जन्म से पूर्व निश्चित होना)। वे विश्वास नहीं करते कि मानव के दुखों का कोई विशेष कारण है या फिर इन दुःखों से मुक्ति मिल सकती है। वे मानव के प्रयासों में भी विश्वास नहीं करते थे और उनका विचार था कि सभी प्राणी मात्र अपने भाग्य के समक्ष असहाय हैं। गोशाल ने कहा कि सभी को दुःखों से होकर गुजरना पड़ता है और इसका अन्त निश्चित चक्र को पूरा करने पर ही होगा। कोई भी मानव प्रयास समय की परिधि को न कम कर सकता है और न बढ़ा सकता है। उनके अनुयायी कोसल की राजधानी श्रावस्ती के आस-पास केंद्रित थे।



आजीवक भिक्षुओं का निवास-स्थान कही जाने वाली गुफाएँ, लगभग तीसरी शताब्दी बी.सी.ई. (गया जिला, बिहार के समीप बाराबर में स्थित)। श्रेय : थॉमस फ्रेजर पेप्पे। स्रोत : ब्रिटिश लाइब्रेरी, लंदन। चित्र : विकिमीडिया कॉमन्स (https://en.wikipedia.org/wiki/File:Sudama_and_Lomas_Rishi_Caves_at_Barabar,_Bihar,_1870.jpg, https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Lomas_Rishi_entrance.jpg)।

11.9.2 अन्य विचार

चार्वाक सम्प्रदाय के लोग पूर्ण भौतिकवादी थे। उनका विचार था कि मनुष्य मिट्टी का बना है और मिट्टी में मिल जाएगा। इसलिए मानव जीवन का उद्देश्य भौतिक सुख का भोग करना होना चाहिए। पुराण कस्यप ने अक्रिय या क्रियाहीनता दर्शन का प्रचार किया। वह एक ब्राह्मण शिक्षक थे और उनका मुख्य सिद्धान्त था कि कार्य गुण दोष का निर्धारण नहीं करता। उनके अनुसार यदि कोई व्यक्ति सृष्टि के सभी जीव-जन्तुओं का वध कर दे तब भी वह किसी पाप का भागीदार नहीं होगा। इसी भांति वह कोई पुण्य नहीं प्राप्त करेगा चाहे वह कितने भी अच्छे कार्य करे यहाँ तक कि वह गंगा के किनारे भी खड़ा रहे। इसी प्रकार आत्म-नियंत्रण, दीनता और सत्यवादिता उसके लिए कोई भी गुण प्राप्त करने में सहायक नहीं होगी। अजित केशकंबलिन ने भी प्रचारित किया कि मृत्यु के प्रत्येक वस्तु समाप्त हो जाती है और मृत्यु के बाद आगे कोई जीवन नहीं होता। वह इस बात में कोई विश्वास नहीं करते थे कि कोई अच्छा या बुरा कार्य करता है या किसी के अधिकार में उच्च तथा अलौकिक शक्तियाँ हैं। इस सम्प्रदाय के अनुसार सांसारिक सुखों को भोगने में कोई बुराई नहीं है और वध करने में भी कोई पाप नहीं है। पकुध कच्चायन ने अशाश्वतवाद के सिद्धान्तों का प्रवर्तन किया जिसके अनुसार सात तत्व हैं जो स्थिर हैं और जो किसी भी प्रकार से दुःख या सुख में योगदान नहीं करते। शरीर अंततः इन सात तत्वों में विलीन हो जाता है।

11.10 नए धार्मिक आंदोलनों का प्रभाव

नये धार्मिक विचारों के प्रादुर्भाव एवं विकास ने समकालीन सामाजिक जीवन में कुछ विशेष परिवर्तन किए। उनमें कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन निम्नलिखित हैं :

- i) इस काल में सामाजिक समानता के विचार को लोकप्रिय किया गया। बौद्ध मतालम्बियों तथा जैनियों ने जाति-व्यवस्था को कोई महत्व नहीं दिया। उन्होंने विभिन्न जातियों के लोगों को अपने धर्म में स्वीकृत किया। युगों से समाज में ब्राह्मणों के स्थापित प्रभुत्व को यह एक महान चुनौती थी। बौद्ध व्यवस्था में महिलाओं को स्वीकार करने का समाज पर एक विशेष प्रभाव हुआ क्योंकि इस कार्य ने महिलाओं को पुरुषों के समान स्थान समाज में प्रदान किया।
- ii) ब्राह्मणिक साहित्य में व्यवसाय करने वाले लोगों को छोटा स्थान दिया गया था। समुद्र यात्रा की भी निंदा की गई थी। लेकिन बौद्ध धर्म और जैन धर्म ने जाति व्यवस्था को कोई महत्व नहीं दिया और न ही समुद्र यात्रा को गलत समझा। इसलिए इन नये धर्मों ने व्यापारिक समुदाय को काफी उत्साहित किया। इससे भी अधिक, इन दोनों धर्मों के द्वारा कर्म की अवधारणा पर भविष्य के जीवन के लिए बल देना अप्रत्यक्ष रूप से व्यापारी समुदाय की गतिविधियों के लिए अनुकूल था।
- iii) नये धर्मों ने प्राकृत, पाली और अर्ध-मगधी जैसे भाषाओं को महत्व दिया। बौद्ध एवं जैन दर्शनों की इन भाषाओं में विवेचना की गई और बाद में धार्मिक पुस्तकों को स्थानीय भाषाओं में लिखा गया। इसने स्थानीय भाषाओं के साहित्य के विकास का मार्ग प्रशस्त किया। जैनियों ने अपने धार्मिक उपदेशों को अर्ध-मगधी भाषा में लिखकर प्रथम बार साहित्य को मिश्रित भाषा में लिखने का स्वरूप प्रदान किया।

बोध प्रश्न 2

- 1) जैन धर्म के मूलभूत सिद्धान्त क्या हैं?

2) *आजीवक* कौन थे? उनके विचार क्या थे? पांच पंक्तियों में उत्तर लिखिए।

3) निम्न कथनों में कौन-सा कथन (✓) सही है और कौन-सा गलत (×) निशान लगाइए।

- i) पार्श्वनाथ के चार सिद्धान्तों में महावीर ने *ब्रह्मचर्य* का सिद्धान्त जोड़ा।
- ii) महावीर सर्वोच्च रचयिता में विश्वास नहीं करते थे।
- iii) *निर्वाण* की अवधारणा बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म में एक ही है।
- iv) महावीर के सिद्धान्तों के मूल ग्रंथों को *पूर्वो* के नाम से जाना जाता है।
- v) विधार्मिक सम्प्रदायों के प्रादुर्भाव के कारण स्थानीय भाषाओं के साहित्य का विकास हुआ।

11.11 सारांश

इस इकाई में आपने लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. में उत्तरी भारत में नवीन धार्मिक विचारों के उद्भव और स्थापित होने के विषय में पढ़ा। समकालीन सामाजिक-आर्थिक आवश्यकताओं ने इन नवीन धार्मिक विचारों के प्रादुर्भाव में विशेष योगदान दिया। इनमें से बौद्ध धर्म तथा जैन धर्म अत्यधिक लोकप्रिय हुए। कुछ आपसी मतभेद होने के बावजूद दोनों धर्मों ने मानवता, नैतिक जीवन, *कर्म* और *अहिंसा* पर जोर दिया। जाति-व्यवस्था, ब्राह्मणिक प्रभुत्व, पशु-बलि और ईश्वर के विचार के दोनों ही कठोर आलोचक थे। स्थापित वैदिक धर्म के लिए यह सीधी चुनौती थी। इसके अतिरिक्त अन्य भिन्नमत सम्प्रदायों जैसे *आजीवकों* और उनके विचारों के विषय में भी आपने जाना। इन सबके कारण सामान्य जन के दृष्टिकोण में एक विशेष परिवर्तन हुआ और इसके परिणामस्वरूप उन्होंने युगों पुरानी ब्राह्मणिक धर्म की सर्वोच्चता के प्रभुत्व पर प्रश्न लगाना आरंभ कर दिया।

11.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

- 1) आपको यहाँ लिखना है कि बुद्ध का *निर्वाण* व *कर्म* से क्या तात्पर्य था। देखिए भाग 11.4।
- 2) आपको अपने उत्तर में बौद्ध धर्म के व्यावहारिक पक्ष, इसका सामाजिक समानता तथा लोकप्रिय भाषा पर बल आदि को सम्मिलित करना चाहिए। देखिए उपभाग 11.5.1।

भारत का इतिहास:
प्राचीनतम काल
से लगभग
300 सी.ई. तक

3) i) ✓, ii) ×, iii) ×, iv) ✓, v) ×

बोध प्रश्न 2

- 1) आपको पांच सिद्धांतों अर्थात् सत्य, अहिंसा, कोई सम्पत्ति नहीं रखना, कुछ ग्रहण न करना, ब्रह्मचर्य का पालन करना – के बारे में बताना है और फिर उचित विश्वास, उचित ज्ञान और उचित कार्य जैसे सिद्धान्तों का अनुसरण करके कोई कैसे निर्वाण प्राप्त कर सकता है का भी विवेचन करना है। देखिए भाग 11.7।
- 2) नन्द वच्च ने जिस सम्प्रदाय की स्थापना की, उसको शूद्र संन्यासियों का सम्प्रदाय कहा जाता है। उनका विश्वास था कि व्यक्ति प्रकृति के नियमों के नियंत्रण में है। देखिए भाग 11.9।
- 3) i) ✓, ii) ✓, iii) ×, iv) ✓, v) ✓,

11.13 शब्दावली

अहिंसा	: किसी की हत्या न करना और न ही हिंसा करना।
विधर्मिक	: गैर रुढ़िवादी।
भौतिकवाद	: भौतिक वस्तुओं पर अधिक बल देना।
पिटक	: बौद्ध धर्म के धार्मिक ग्रंथ।
पूर्व	: जैनियों के धार्मिक ग्रंथ।
सम्प्रदाय	: मत एवं विश्वास के आधार पर लोगों या गुटों का एकीकरण।
तीर्थंकर	: जैन धर्म के वे विद्वान या गुरु जिन्होंने सर्वोच्च ज्ञान की प्राप्ति की।

11.14 संदर्भ ग्रंथ

- ऑलचिन, ब्रिजेट तथा रेमंड (1988) *द राइज ऑफ सिविलाइजेशन इन इंडिया एण्ड पाकिस्तान*, नई दिल्ली।
- घोष, ए. (1973) *द सिटी इन अर्ली हिस्टोरिकल इंडिया*, शिमला।
- कोसाम्बी, डी. डी. (1987) *द कल्चर एण्ड सिविलाइजेशन ऑफ ऐंशियंट इंडिया इन हिस्टोरिकल आउटलाइन*, नई दिल्ली।
- सराओ, के. टी. एस. तथा जेफरी, डी. लॉग (2017) *बुद्धिज्म एण्ड जैनिज्म*, नीदरलैंड।
- शर्मा, आर. एस. (1983) *मटीरियल कल्चर्स एण्ड सोशल फॉरमेशंस इन ऐशियंट इंडिया*, नई दिल्ली।
- शर्मा, आर. एस. (1995) *पर्सपेक्टिव इन सोशल एण्ड इकॉनॉमिक हिस्टरी ऑफ ऐंशियंट इंडिया*, नई दिल्ली।
- वाग्ले, एन. के. (1966) *सोसाइटी एट द टाइम ऑफ द बुद्धा*, बॉम्बे।